Resistance to Communalism-3
हस्तक्षेप
राष्ट्रीय सलाहकार परिषद
बनाम
राष्ट्रीय एकता परिषद
सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक पर टकराव
INDIA POLICY FOUNDATION
भारत नीति प्रतिष्ठान

हस्तक्षेप

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद
बनाम
राष्ट्रीय एकता परिषद

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक पर टकराव

INDIA POLICY FOUNDATION
भारत नीति प्रतिष्ठान

इस प्रकाशन के किसी भी अंश का प्रतिलिपिकरण, ऐसे यंत्र में भंडारण जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो या स्थानान्तरण, किसी भी रूप में या किसी भी विधि से, इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटो–प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या किसी और ढंग से, प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना नहों किया जा सकता।

प्रकाशकः
भारत नीति प्रतिष्ठान
डी–51, हौज खास
नई दिल्ली–110016 (भारत)
दूरभाष : 011–26524018
फैक्स : 011–46089365
ई–मेल : indiapolicy@gmail.com
वेबसाइट : www.indiapolicyfoundation.org

संस्करण : प्रथम : दिसम्बर– 2011

भारत नीति प्रतिष्ठान

मूल्य : 20 रूपये मात्र

मुद्रक : Arora Enterprises, 80, DSIDC, Okhla Industrial Area, Phase-I

प्रस्तावना

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक पर संसद में पहुंचने से पहले ही बहस शुरू हो गई। संभवतः इतनी बहस तो 50 के दशक में हिन्दू कोड बिल पर भी नहीं हुई थी। तब बहस का रूख रचनात्मक था। इस प्रस्तावित विधेयक पर बहस के दो महत्वपूर्ण आयाम हैं। पहला, इसने संविधान के बुनियादी ढांचे पर ही प्रहार करने का काम किया है और देश के नागरिकों की एक संस्था को सांप्रदायिक, अतिवादी, अपराधी घोषित कर दिया है। 1871 में औपनिवेशिक शान ने Criminal Tribes Act बनाया था। जिसमें कुछ जनजातियों को अपराधी घोषित कर दिया था। प्रस्तावित सांप्रदायिक लक्षित हिंसा विधेयक उससे भी एक कदम आगे है। यह बहुसंख्यक समाज को हिंसक, अपराधी मानता है। इतना ही नहीं पुलिस/प्रशासन को भी सांप्रदायिक चश्मे से देखता है। इसका दूसरा पक्ष भी है। इसने भारत के संघवाद (Federalism) को तार–तार करने का दुस्साहस किया है।

यह प्रस्तावित विधेयक सांप्रदायिक ध्रुवीकरण करने का एक उपकरण बन गया है। क्या इसे राष्ट्रीय एकता परिषद (रा.ए.प.) में लाया जाना चाहिए था? सरकार ने राष्ट्रीय सलाहकार परिषद द्वारा तैयार इस विधेयक को रा.ए.प. में विचारार्थ रखा। राजनीतिक दलों चाहे वामपंथी हो या दक्षिणपंथी, यूपीए के घटक हो या एनडीए, का एक स्वर से इसकी निंदा करते हुए इसको संघवाद विरोधी विधेयक करार दिया। इसने एक बड़ा सवाल खड़ा कर दिया है कि आखिर वे कौन लोग हैं जो भारतीय समाज के सौहार्द्र एवं देश के संविधान को चुनौती देने में नैसर्गिक सुख का अनुभव करते हैं?

अतः इस हस्तक्षेत्र पत्र में राष्ट्रीय एकता परिषद एवं राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की भूमिकाओं पर प्रकाश डालने की कोशिश की गई है।

श्री अनिल पांडेय और श्री राजन श्रीवास्तव ने शोध कार्य कर इसका संपादन किया है। उम्मीद है यह पुस्तिका अनेक तथ्यों से समाज को अवगत करा पाएगा।

भा.नी.प्र. द्वारा Resistance to Communalism Series में यह तीसरी प्रस्तुति है।

प्रो. राकेश सिन्हा
मानद निदेशक
भारत नीति प्रतिष्ठान

28.12.2011

अध्याय–1

सांप्रदायिक हिंसा (रोकथाम, नियंत्रण एवं पीड़ितों का पुनर्वास) विधेयक 2011

करीब डेढ़ दशक बाद सत्ता में आई यूपीए ने सत्ता में आते ही सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए जब एक सख्त कानून बनाने की बात शुरू की तो लगा कि शायद यह सरकार पोटा जैसे सख्त कानून को निरस्त करने का प्रायश्चित करना चाह रही हो, लेकिन जल्द ही भारत का यह भ्रम टूट गया। सरकार भीतर–बाहर दोनों जगहों से बेहद छद्म धर्म–निरपेक्ष ताकतों से घिरी थी। सरकार में शामिल कई घटक दल और बाहर से समर्थन दे रहे वामपंथी दलों के दबाव में यूपीए ने सांप्रदायिक हिंसा से निपटने के लिए एक सख्त कानून का ड्राफ्ट बनाना शुरू किया। 2005 में संसद के शीतकालीन सत्र में गृहमंत्री शिवराज पाटिल ने सांप्रदायिक हिंसा रोकथाम, नियंत्रण एवं पीड़ितों का पुनर्वास विधयेक 2005 प्रस्तुत किया। इस विधेयक पर अनेक मुस्लिम और ईसाई संगठनों ने आपत्ति दर्ज की और इसे प्रभावहीन बताया। सरकार में बैठे लोगों ने इनकी मांग का जोरदार समर्थन किया और आखिरकार सरकार मान गई। इसका एक और ड्राफ्ट 2009 में तैयार हुआ जिसे सांप्रदायिक हिंसा रोकथाम, नियंत्रण एवं पीड़ितों का पुनर्वास विधेयक 2009 नाम मिला।

फिर भी इस विधेयक में किसी भी हिंसा को रोकने के लिए राज्य सरकारों को पूरा अधिकार दिया गया था। इस बिल में हर समुदाय के लोगों द्वारा की गई हिंसा को सांप्रदायिक हिंसा में रखा गया था, चाहे वे किसी भी धर्म, समुदाय या जाति से क्यों न संबंध रखते हों। मुस्लिम और ईसाई संगठनों के विरोध के कारण इस विधेयक को फिर से तैयार करना पड़ा। नए प्रावधानों के साथ 2009 में फिर से एक विधेयक का स्वरूप आया जिसे सांप्रदायिक हिंसा रोकथाम विधेयक 2009 कहा गया। इस विधेयक को भी नकार दिया गया। ज्यादातर राजनीतिक दला का यह कहना था कि विधेयक में केंद्र सरकार को जरूरत से ज्यादा अधिकार दिए गए हैं, वहीं मुस्लिम, ईसाई और छद्म धर्म निरपेक्ष संगठन इसके प्रावधानों को अपर्याप्त बता रहे थे। उनका तर्क था कि सांप्रदायिक हिंसा के लिए पुलिस व प्रशासन को जिम्मेदार ठहराने तथा मानवाधिकार आयोग को तुरंत हस्तक्षेप करने का अधिकार देने और धारा 355 व 356 के इस्तेमाल का प्रावधान बेहद जरूरी है।

मुस्लिम और ईसाई संगठनों का विरोध शुरू होने के बाद सरकार ने सोनिया गांधी की अध्यक्षता वाली राष्ट्रीय सलाहकार यानी एनएसी को सांप्रदायिक हिंसा (रोकथाम, नियंत्रण एवं

पीड़ितों का पुनर्वास) विधेयक को फिर से ड्राफ्ट करने की जिम्मेदारी सौंपी। कभी विधेयक के पहले के ड्राफ्टों का विरोध करने वाले हर्ष मंदर, फराह नकवी और अरुणा रॉय का एनएसी में प्रवेश हो चुका था। इस तरह से सांप्रदायिक हिंसा (रोकथाम, नियंत्रण एवं पीड़ितों का पुनर्वास) विधेयक 2011 का माहौल तैयार हुआ। यह विधेयक बिल्कुल वैसा ही था जैसा कई मुसलमान और ईसाई संगठन चाहते थे। नौ अध्यायों और 138 अनुच्छेदों वाले इस विधेयक के प्रावधानों की आलोचना होने लगी। पहली बार ऐसा हुआ कि सांप्रदायिक विधेयक के संसद में जाने से पहले ही संसद से सड़क तक बहस शुरू हो गई। विधेयक में ऐसे अनेक प्रावधान हैं जो संविधान के बुनियादी ढांचे और उसकी आत्मा पर सीधा प्रहार करते हैं।

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक 2011 में कुछ बेहद आपत्तिजनक प्रावधान

अनुच्छेद 3–ई में देश के नागरिकों को दो भागों में बांटा गया है। विशिष्ट नागरिक और आम नागरिक। धार्मिक अल्पसंख्यकों, भाषाई अल्पसंख्यकों, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को एक श्रेणी में रखा गया है इसे 'समूह' का नाम दिया गया है। विधेयक इन्हें खास दर्जा देता है बाकी सभी को दूसरे (Others) कहकर संबोधित किया गया है। वैसे भाषाई अल्पसंख्यकों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों को शामिल करना तो एक दिखावा भर है ताकि इनकी आड़ में मुसलमानों और ईसाईयों को सारे संविधानेत्तर फायदे पहुंचाएं जा सकें और बहुसंख्यकों को दोयम दर्जे की नागरिकता वाला बना दिया जाए। सभी व्यवहारिक कारणों से बहुसंख्यक का सीधा अर्थ हिन्दू समाज है।

बहुसंख्यकों के प्रति यह विधेयक आक्रामक और संकीर्ण दृष्टि रखता है। विधेयक बनाने वालों ने यह तय कर रखा है कि भविष्य में सभी प्रकार की सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा के लिए 'दूसरे' अर्थात हिंदू ही जिम्मेदार होंगे। अल्पसंख्यकों से कभी कोई गलती हो ही नहीं सकती।

भारतीय संघवाद पर आघात

धारा 20 के प्रावधानों के मुताबिक किसी भी प्रदेश में होने वाली संगठित सांप्रदायिक हिंसा की स्थिति में केंद्र आंतरिक अशांति की घोषणा कर सकती है। कानून–व्यवस्था राज्य सूची का विषय है। इसलिए बहुत से मुख्यमंत्रियों ने इस बात की आशंका जताई की कि इस तरह से केंद्र को अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप करने का मौका मिल सकता है। (देखें धारा 20)

'समूह' के किसी सदस्य द्वारा किसी हिंदू पर दुर्भावना, सार्वजनिक अपमान या जीविकोपार्जन में बाधा पहुंचाने की शिकायत पर तुरंत कार्रवाई होगी और गिरफ्तार भी किया जा सकता है, लेकिन किसी मुस्लिम या ईसाई द्वारा हिंदू व्यक्ति के साथ किया गया दुर्व्यवहार इसके दायरे में नहीं आएगा।

विभिन्न समुदायों के बीच सामाजिक एवं आर्थिक

विधेयक में एक विचित्र प्रावधान है– 'शत्रुतापूर्ण वातावरण' अगर समूह का कोई सदस्य यह महसूस करता है कि बहुसंख्यकों द्वारा प्रतिकूल या शत्रुतापूर्ण वातावरण की वजह से उसकी आजीविका, व्यापार, निवास आदि बाधित हो रहा है ता उसकी शिकायत पर तत्काल मुकदमा दर्ज हो जाएगा। उदाहरण के लिए अगर कोई हिंदू अपनी दुकान किसी अल्पसंख्यक को व्यापार के लिए किराए पर देने से मना कर देता है तो उस व्यक्ति के खिलाफ अजीविका में बाधा पहुंचाने के आरोप में मुकदमा दर्ज हो जाएगा। जबकि मौजूदा कानूनो प्रावधान किसी भी व्यक्ति को किराएदार रखने या किराए पर अपनी संपत्ति देने से पहले उसके संबंध में निर्णय लेने की आजादी देते हैं। (देखें अनुच्छेद 35)

यौन अपराध पर दोहरा मापदंड

विधेयक में यौन उत्पीड़न को भी सांप्रदायिक व नस्लवादी चश्मे से देखा गया है। 'समूह' यानी अल्पसंख्यक वर्ग की महिलाएं अगर बहुसंख्यकों के खिलाफ यौन अपराध की शिकायत करें तो विधेयक उसे गंभीर अपराध मानते हुए कड़ी सजा का प्रावधान करता है लेकिन किसी हिंदू महिला के साथ हुई छेड़छाड़ या बलात्कार को इस विधेयक के दायरे से बाहर रखा गया ह (देखें अनुच्छेद 7)

राष्ट्रीय प्राधिकरण का प्रावधान

विधेयक के बहाने राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर बहुत ताकतवर संस्था राष्ट्रीय प्राधिकरण का प्रावधान है जिसके दायरे में केंद्र और राज्य की सुरक्षा एजेंसियां होंगी। ऐसा लगता है कि केंद्र, सेना व राज्यों के पुलिस बल और राज्य सरकारों की दूसरी प्रशासनिक इकाइयों को पंगु मानकर चल रही है। उसकी दृष्टि में केवल केंद्र द्वारा चुने गए प्रतिनिधि या नियुक्त अधिकारी ही अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के लिए कटिबद्ध हो सकते हैं। राज्य सरकारों को इस पर बहुत आपत्ति है। प्रावधान कहते हैं कि इस प्राधिकरण के सात में से चार सदस्य अल्पसंख्यक समुदाय से होंगे। अध्यक्ष और उपाध्यक्ष अनिवार्यतः अल्पसंख्यक समुदाय से ही होंगे। (देखें अनुच्छेद 20)

कानून व्यवस्था राज्य का विषय है लेकिन यह विधेयक केंद्र को राज्य सरकार के मामलों में हस्तक्षेप करने और धारा 355 जैसे अधिकारों से लैस करता है। केंद्र को दंगे जैसी आसानी से काबू में आ सकने वाली प्रशासनिक समस्या की स्थिति में भी राज्यों में राष्ट्रपति शासन लगाने का अधिकार मिल जाएगा। यानी राज्य सरकारें कांपती रहें और अपनी सरकार बचाने रखने के लालच में अल्पसंख्यकों के आगे करबद्ध रहें।

नौकरशाही, पुलिस एवं जांच एजेंसियों की निष्पक्षता एवं स्वायत्ता के हनन का प्रयास

विधेयक में पुलिस और नौकरशाही को मानसिक रूप से प्रताड़ित करने वाले प्रावधान हैं। अगर सरल शब्दों में कहें तो सांप्रदायिक दंगे हिंदू शुरू करते हैं और पुलिस व नौकरशाही इसे नहीं रोकती। दंगे के लिए प्रशासन को जिम्मेदार ठहराया जाएगा। उनके लिए सश्रम कारावास और दंड का प्रावधान है। उन्हें बहुसंख्यकों के विरूद्ध कार्रवाई करने को बाध्य किया जाएगा। यानी शासन–प्रशासन हिंदुओं को दंगाई करार दे और सिर्फ अल्पसंख्यकों की सुरक्षा में जुट जाए। (देखें अनुच्छेद 57 एवं 58)

जहां 2005 का विधेयक सांप्रदायिक हिंसा की स्थिति में सभी पीडितों के साथ चाहे वे किसी धर्म या संप्रदाय के मानने वाले हों, कोई भेदभाव नहीं करता था, वहीं 2009 के प्रावधान में अल्पसंख्यकों को विशेषाधिकार देने की प्रथा शुरू हुई। 2011 के विधेयक का प्रावधान तो सभी संवैधानिक मर्यादा एवं सीमाओं की अनदेखी करते हुए हिंदुओं को क्रूर, हिंसक, आततायी करार देकर उन्हें भारत में निम्न श्रेणी का नागरिक बनाने को उतारू है।

अध्याय–2

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद (एनएसी)

यूपीए सरकार ने 2004 में सत्ता में आने के साथ ही जो कार्य किए उनमें से एक हैं राष्ट्रीय सलाहाकार परिषद का गठन। एक सरकारी आदेश के जरिए 31 मई, 2004 को राष्ट्रीय सलाहकार परिषद का गठन हुआ। इसका उद्देश्य न्यूनतम साझा कार्यक्रम को लागू करने और उसकी गति पर नजर बनाए रखना, सरकार को नीतियां बनाने के लिए सलाह देना तथा सरकार के कामकाज को सुचारू रूप से चलाने में सहयोग प्रदान करना था। कैबिनेट मंत्री के दर्जे के साथ सोनिया गांधी को इसका अध्यक्ष बनाया गया। परिषद के अध्यक्ष की सलाह पर प्रधानमंत्री सदस्यों की नियुक्ति करते हैं। पहली यूपीए सरकार द्वारा गठित राष्ट्रीय सलाहकार परिषद का कार्यकाल 31 मार्च, 2008 को समाप्त हो गया। 29 मार्च, 2010 को इसका फिर से गठन किया गया। सोनिया गांधी की अध्यक्षता में 14 सदस्यीय समिति बनाई गई जिसमें से ज्यां द्रज बाद में अलग हो गए और राम दयाल मुंडा का निधन हो चुका है।

राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के सदस्य

सोनिया गांधीः अध्यक्ष
एम.एस. स्वीमानाथन, सांसद
राम दयाल मुंडा, सांसद (दिवंगत)
डॉ. नरेन्द्र जाधव
मौिद टंडन
अरुणा रॉय
माधव गाडगिल
नरेश चन्द्र सक्सेना
डॉ. ए.के. शिवकुमार
दीप जोशी
अनु आगा
फराह नकवी
हर्ष मंदर
मीराई चटर्जी

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक तैयार करने में राष्ट्रीय सलाहकार परिषद के दो सदस्यों श्रीमती फराह नकवी और श्री हर्ष मंदर ने अतिसक्रिय भूमिका निभाई है। ये दोनों सांप्रदायिक

एवं लक्षित हिंसा विधयक के लिए बनी सलाहकार कमेटी और ड्राफ्टिंग कमेटी के संयोजक भी हैं।

फराह नकवीः

फराह नकवी का नाम बहुत से मुस्लिम एनजीओ के साथ जुड़ा है। महिलाओं के अधिकारों की लड़ाई में उनके किसी सराहनीय योगदान की कोई चर्चा नहीं मिलती। वे 'बुंदेलखंड पहल' नामक एक मीडिया संस्था भी चलाती हैं जहां से 'खबर लहेरिया' के नाम का एक अखबार भी निकलता है। खबर लहेरिया को बुंदेलखंड की गरीब अनपढ़ महिलाओं के कल्याण के लिए निकलने वाले अखबार के रूप में प्रचारित किया जाता है। जबकि बुंदेलखंड की 90 प्रतिशत महिलाएं अनपढ़ हैं। फराह ने गुजरात की एक दंगा पीड़ित मुस्लिम महिला बिलकिस बानो की आपबीती मीडिया को सुनाई और सुर्खियां बटोरी थीं। हालांकि बात में बिलकिस ने अदालत में जिरह के दौरान फराह से मिलकर उन्हें अपनी आपबीती बताने और यहां तक कि फराह को पहचानने से भी इंकार कर दिया था। फराह नकवी सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक की संयोजक भी हैं उनकी देखरेख में जो विधेयक तैयार हुआ है वह बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक महिलाओं के विरूद्ध हुए यौन अत्याचारों में फर्क करता है।

हर्ष मंदरः

हर्ष मंदर पूर्व आईएएस अधिकारी हैं। आईएएस अधिकारी रहने के दौरान ही वे ब्रिटिश एनजीओ 'एक्शन एड' से जुड़ गए थे। वे 'एक्शन एड' के भारत के कर्ता–धर्ता भी रहे हैं। अरबों रूपये का अनुदान पाने वाला 'एक्शन एड' कई बार विवादों में आया है। उन्होंने 'अमन बिरादरी' 'न्यायग्रह' और 'दिल से' जैसी संस्थाएं भी बना रखी हैं। वे दिवंगत कामरेड सफदर हाशमी की पत्नी शबनम हाशमी के साथ 'अनहद' (एक्ट नाउ फॉर ह्यूमन एंड डेमोक्रेसी) के भी संस्थापक सदस्य हैं। अनहद को सांप्रदायिक हिंसा से लड़ने का संगठन बताया जाता है। ज्ञातव्य है कि ये वहो हर्ष मंदर हैं जिन्होंने अरूणा राय के साथ मिलकर एक वैकल्पिक लोकपाल बिल पेश करके अन्ना के आंदोलन को कमजोर करने की कोशिश की थी। जन लोकपाल पर वे सार्वजनिक रूप से सहमति जता चुके हैं। हिंदुस्तान टाइम्स अखबार में "व्हाई आई डिड नॉट ज्वाइन अन्ना हजारे" शोर्षक से छपे लेख में हर्ष मंदर ने कहा था कि जिस मंच पर बैठक अन्ना अनशन कर रहे थे उस मंच पर भारत माता की एक बड़ी सी तस्वीर लगी थी। इस वजह से वह अन्ना को समर्थन देने नहीं गए। हर्ष मंदर सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक के लिए गठित सलाहकारी समिति और ड्राफ्ट कमेटी दोनों के सदस्य हैं।

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक के लिए गठित सलाहकार समिति के सदस्य

1. अबुसलेह शरीफ
2. असगर अली इंजीनियर
3. गगन सेठी
4. एच.एच. फुल्का
5. जॉन दयाल
6. जस्टिस हॉस्बेट सुरेश
7. कमाल फारुकी
8. मंजूर आलम
9. मौलाना नियाज फारुकी
10. राम पुनियानी
11. रूपरेखा वर्मा
12. समर सिंह
13. सौम्या उमा
14. सिस्टर मेरी स्केरिया
15. सुखदेव थोराट
16. सैयद शहाबुद्दीन
17. उमा चक्रवर्ती
18. उपेन्द्र बख्शी

9 दिसंबर 2010 तक शबनम हाशमी भी इसकी सदस्य रही हैं और उन्होंने विधयेक की रूपरेखा तैयार करने में अहम भूमिका निभाई है। बाद में किसी वजह से वह इससे अलग हो गईं।

स्वाल यह उठता है कि कमेटी के सदस्यों के चयन का क्या आधार था? इससे भी बड़ा सवाल यह है कि क्या एनएसी सचमुच सांप्रदायिक हिंसा जैसी चुनौती पर विचार करने के लिए गंभीर थी या उसके पीछे कोई गुप्त एजेंडा रहा है। समिति के कुछ सदस्यों की उपलब्धियां और उनकी पृष्ठभूमि पर एक नजर डालने के बाद एनएसी के गुप्त एजेंडे को समझने में थोड़ी आसानी हो जाती है।

अबुसलेह शरीफः

अबुसलेह शरीफ सच्चर कमेटी के सदस्य थे। कमेटी के सदस्य रहते हुए उन्होंने कमेटी के सदस्य के तौर पर इसरो और डीआरडीओ जैसी सामरिक महत्व की संस्थाओं का बिना कमेटी के अध्यक्ष को सूचित किए गोपनीय रूप से एक चिठ्ठी लिखी थी जिसमें उन्होंने इन संस्थाओं

से अपने यहां काम करने वाले मुसलमानों का ब्योरा मांगा था। वे शरीफ ही थे जिनके हस्ताक्षर एवं अनुमोदन से सच्चर कमेटी में मुस्लिम सदस्यों की एक उपसमिति बनाई गई। उस उपसमिति का कहना था कि अनुसूचित जातियों के लिए लोकसभा एवं विधानमंडल में आरक्षण मुस्लिम प्रतिनिधित्व में बाधा पहुंचाता है। इस उपसमिति ने अनुशंसा की थी कि उन सभी चुनाव क्षेत्रों को कभी भी आरक्षित नहीं किया जाना चाहिए। अनुसूचित जातियों के लिए एसे विचार रखने वाले अबु सलेह सलाहकार समिति के सदस्य हैं।

असगर अली इंजीनियाः

असगर अली इंजीनियर की पहचान एक मुस्लिम स्कॉलर, लेखक और कार्यकर्ता की है। वे प्रगतिशील दाउदी बोहरा आंदोलन को चलाते हैं। वे एशियन मुस्लिम एक्शन नेटवर्क के अध्यक्ष हैं। डॉ. राम पुनियानी (इसी समिति के एक अन्य सदस्य) के साथ मिलकर वे मुंबई में सेंटर फॉर स्टडी ऑफ सोसाइटी एंड सेक्युलरिज्म चलाते हैं।

गगन सेठीः

गगन सेठ अहमदाबाद स्थित एनजीओ जन विकास के मैनेजिंग ट्रस्टी हैं। मानवाधिकारों के लिए काम करने का दम भरने वाला जन विकास, मानवाधिकार के दायरे में उने लोगों की हिमायत करता है जिन पर पोटा के तहत राष्ट्रद्रोह के मामले दर्ज हुए। सेक्युलर साइट्स के स्टार लेखक गगन सेठी गजरात के सभी हिंदुओं को मुस्लिम विरोधी करार देने में कोई संकोच नहीं करते। योगिंदर सिकंद को दिए एक इंटरव्यू में उन्होंने सभी गुजरात हिंदुओं को सांप्रदायिक बताया था जिसे पाकिस्तान में बड़ी सराहना मिली थी। इसे पाकिस्तान क्रिस्चियन पोस्ट की बेवसाइट (www.pakistanchristianpost.com) पर देखा जा सकता है।

जस्टिस होस्बटे सुरेशः

20 जुलाई, 1929 को पैदा हुए जस्टिस होस्बटे सुरेश ने मुंबई हाईकोर्ट से प्रैक्टिस शुरू की। वे विभिन्न कॉलेजों में कानून की कक्षाएं भी लेते रहे हैं। उन्होंने पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश को आतंकवादी भी कह दिया था। एक पूर्वमाननीय न्यायाधीश होने के बावजूद बिना किसी सबूत या ठोस वजह के उन्होंने एटीएस प्रमुख हेमंत करकरे की हत्या के पीछे हिंदुओं का हाथ बता दिया। हेमंत करकरे की मौत के बाद होस्बटे सुरेश ने कुछ ऐसा बयान दिया था, "जब मैंने करकरे की हत्या के बारे में सुना तो मेरी पहली प्रतिक्रिया थी कि जरूर किसी कट्ट सनकी हिंदू ने उनकी हत्या की होगी।" उनके इस बयान से उनका वैचारिक और सामाजिक दर्शन समझा जा सकता है। ए.आर. अंतुले, दिग्विजय सिंह और अजीज बर्नी जैसे घोर सांप्रदायिक लोगों के साथ पूर्व न्यायाधीश जस्टिस सुरेश ने भी मुंबई की सड़कों पर 26/11 को हुई आतंकी कार्रवाई के शिकार हेमंत करकरे की हत्या की न्यायिक जांच की मांग कर दी थी।

कमाल फारुकीः

मुस्लिम अधिकारों के लिए समर्पित कमाल फारुकी बैंकिंग और फाइनेंशियल मैनेजमेंट के विशेषज्ञ हैं। समाजवादी पार्टी के नेता कमाल फारूकी भारतीय मुस्लिम बिरादरी की एक जानी–मानी शख्सियत हैं। फारूकी मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के सदस्य भी हैं। वे शरिया कानूनों के चलने वाली संस्था ऑल इंडिया मिल्ली काउंसिल से भी जुड़े हैं और दिल्ली अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष भी रह चुके हैं।

मंजूर आलमः

मंजूर आलम मुसलमानों के दिल्ली स्थित एक सामाजिक विज्ञान संस्थान इंस्टीट्यूट ऑफ ऑब्जेक्टिव स्टडीज (आईओएस) के अध्यक्ष तथा ऑल इंडिया मिल्ली काउंसिल के जनरल सेक्रेटरी हैं। आईओएस और मिल्ली काउंसिल मुसलमानों के लिए काम करती है।

मौलाना नियाज फारूकीः

इस्लामिक संस्था जमाएत–ए–उलेमा–ए–हिंद के सेक्रेटरी मौलाना नियाज फारूकी की सक्रियता कश्मीर मुद्दे पर ज्यादा है। वे कश्मीर मुद्दे पर घाटी और देश के अन्य हिस्सों में सम्मेलन आयोजित कराते रहते हैं जिसका सबसे बड़ा एजेंडा कश्मीर से भारतीय सेना की तैनाती हटाना होता है। मुसलमानों को अलग से आरक्षण देने की मांग वे लंबे समय से कर रहे हैं और इस मुद्दे पर आंदोलन करने की कई बार धमकी तक दे चुके हैं।

राम पुनियानीः

राम पुनियानी ने 2004 में आईआईटी में बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर की नौकरी से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ले ली और ऑल इंडिया सेक्युलर फोरम, सेंटर फॉर स्टडी ऑफ सोसाइटी एंड सेक्युलरिज्म और अनहद जैसे संगठनों से जुड़ गए। 1993 के मुंबई धमाकों के बाद उनके बयानों और 15 अक्टूबर, 2006 को मिल्ली गजट में छपे लेख से पुनियानी के वैचारिक दृष्टिकोण का अंदाजा लगाया जा सकता है। लेख में उन्होंने अफजल गुरु को फांसी देने के सुप्रीम कोर्ट के फैसले की यह कहते हुए जमकर आलोचना की थी कि अफजल गुरु ने संसद पर हमला करने में आतंकियों की मदद की थी और उनका साथ दिया था, न कि खुद सीधे हमला किया था। इसलिए उसे फांसी की सजा देना अनुचित है। वे संसद पर हमला करने वालों के साथ तो खड़े हो जाते हैं लेकिन किसी निर्माण से पहले किए जाने वाले भूमि पूजन जैसी भारतीय परंपरा की भरपूर निंदा करते हैं और इसे गैर–संवैधानिक कार्य करार देते हैं।

जॉन दयालः

वरिष्ठ पत्रकार रहे जॉन दयाल ने देश के कई नामी अखबारों में काम किया है। जॉन दयाल ने ऑल इंडिया क्रिस्चियन काउंसिल और युनाइटेड क्रिस्चियन फोरम फॉर ह्यूमन राइट की स्थापना की और इसके अध्यक्ष के रूप में ईसाइयों के धार्मिक, सामाजिक हितों को जोरदार तरीके से उठाया। लेकिन अपने सार्वजनिक जीवन के दूसरे चरण में उनकी सक्रियता का दायरा और प्रकृति दोनों में भारी बदलाव देखने का मिला। वे स्वयं को अल्पसंख्यकों और दलितों के अधिकारों के लिए संघर्ष को समर्पित व्यक्ति के रूप में प्रचारित करते हैं। देश के सामान्यतः सभी ईसाई बड़ी संस्थाओं एवं मिशनरी से उनका जुड़ाव है। हिंदू विरोधी वेबसाइटों के स्टार जॉन दयाल की अगुवाई में मिशनरी संस्थाएं धर्मांतरण कराने वाले दलितों और आदिवासिया को आरक्षण दिए जाने की मांग कर रही हैं ताकि धर्मांतरण कराने वाले लोग आरक्षण के लाभ से वंचित न हो सकें। जॉन दयाल जनलोकपाल बिल का समर्थ नहीं करते।

रूपरेखा वर्माः

रूपरेखा वर्मा लखनऊ यूनिवर्सिटी की पूर्व वीसी हैं। 2005 के मऊ दंगों पर एकपक्षीय रिपोर्ट पेश किया था। उस रिपोर्ट में उन्होंने बताया था कि हिंदुओं के भारत मिलाप कार्यक्रम आयोजित करने के कारण मुस्लिमों की भावना को ठेस पहुंची और वे हिंसक प्रतिक्रिया देने को विवश हुए। समय–समय पर वे उत्तर प्रदेश राज्य के पाठ्यक्रमों को ब्राह्मणवादी सोच और मुस्लिम विरोधी बताकर चर्चा में आती रही हैं।

सौम्या उमाः

बंगलोर के नेशनल स्कूल से स्नातक सौम्या उमा मानवाधिकारों और महिला अधिकारों के लिए काम करने वाले स्वयंसेवी संगठन चलाती हैं।

सैयद शहाबुद्दीनः

रांची में जन्मे सैयद शहाबुद्दीन ने भारतीय विदेश सेवा की नौकरी छोड़ी और राजनीति में उतर गए। वे बिहार के मुस्लिम बहुल लोकसभा क्षेत्र किशनगंज से सांसद भी रह चुके हैं। शाहबानो मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले का उन्होंने मुखर विरोध किया था। ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड और बाबरी एक्शन कमेटी के सदस्य रहे शहाबुद्दीन को बाबरी मस्जिद के फिर से निर्माण के लिए वैचारिक और कानूनी लड़ाई लड़ते रहे हैं। वे 'मुस्लिम इंडिया' नाम की एक पत्रिका भी निकालते हैं।

सिस्टर मेरी स्केरियाः

सिस्टर मेरी स्केरिया पेशे से वकील हैं। वे ईसाई संस्था सिस्टर ऑफ चैरिटी ऑफ जीसस एंड मेरी संस्था से जुड़ी हैं।

यह विडंबना है कि श्रीमती सोनिया गांधी की अगुवाई वाली एनएसी को सवा अरब की आबादी वाले देश में 20 ऐसे लोग भी नहीं मिल पाए जिनकी विश्वसनीयता संदिग्ध न हो और जो राष्ट्र के हित में सचमुच कुछ करने को प्रतिबद्ध हों। सिख दंगों के पीड़ितों को न्याय दिलाने की लड़ाई लड़ रहे जाने–माने वकील एच.एस. फुल्का ने सलाहकार समिति से इस्तीफा दे दिया था। श्री फुल्का ने ग्रुप थ्योरी (समूह सिद्धांत) पर कड़ी आपत्ति जताई थी। उन्होंने इस संदर्भ में एनएसी को एक चिट्ठी लिखकर कहा था कि ग्रुप थ्योरी एक विभाजक सिद्धांत है और इसकी वजह से दो समुदायों के बीच दूरियां बढ़ेंगी, जो संविधान की आत्मा के विरूद्ध होगा। जब एनएसी ने उनकी राय को दरकिनार कर दिया तो उन्होंने खुद को अलग कर लिया।

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक की ड्राफ्टिंग कमेटी के सदस्यः

गोपाल सुब्रहमण्यम
माजा दारुवाला
नजमी वजीरी
पी.आई. होजे
प्रसाद सिरिवेला
तीस्ता सीतलवाड़
उषा रामनाथन (20 फरवरी, 2011 तक)

वृंदा ग्रोवर (20 फरवरी, 2011 तक)

गोपाल सुब्रहमण्यम

इनम से गोपाल सुब्रहमण्यम जाने–माने वकील तो हैं लेकिन विवादों में छाए रहते हैं। ये सरकार के अटार्नी जनरल थे लेकिन इन पर अदालत में सरकार का पक्ष ठीक से नहीं रखने का आरोप लगा और सरकार के अटार्नी जनरल के पद से हटाना पड़ा।

तीस्ता सीतलवाड

तीस्ता सीतलवाड़ के मन में हिंदुओं के लिए द्वेष के बारे में जो कहें वह कम है। हिंदुओं को अपमानित करने का जहां भी कोई अवसर नजर आता है, तीस्ता उसे बिना समय गंवाए लपक लेती है। मुंबई युनिवर्सिटी से स्नातक के बाद तीस्ता ने पत्रकारिता की शुरूआत की। अपने एक्टिविस्ट पति जावेद आनंद के साथ मिलकर उन्होंने 'कम्युनलिज्म कम्बै' नामक पत्रिका शुरू की। कम्युनलिज्म कम्बैट पत्रिका के जुलाई–अगस्त, 2008 के संपादकीय में तीस्ता इस पत्रिका के शुरू करने की वजह बताते हुए लिखती हैं कि 15 साल पहले मुस्लिमों के खिलाफ हुई एक हिंसा के प्रतिरोध में उन्होंने यह पत्रिका शुरू की। इस संपादकीय में सिमी का समथन करते हुए वे लिखती हैं– सिमी का जेहाद हिंदुत्व का प्रतिकार है।

कम्युनलिज्म कम्बैट के जुलाई–अगस्त, 2006 के संपादकीय में तीस्ता ने मुंबई में हुए एक आतंकी हमले के बारे में लिखा है कि संघ परिवार ने इजरायल की खुफिया एजेंसी मोसाद के साथ मिलकर इस हमले का षड्यत्र रचा। 2002 में भारती की एक स्वयंसेवी संस्था को संयुक्त राष्ट्र में स्वयंसेवी संगठन का दर्जा मिलने से रोकने के लिए उन्होंने पाकिस्तानी प्रतिनिधियों के साथ मिलकर अभियान चलाया था। गुजरात दंगों के मुस्लिम पीड़ितों की रहनुमाई का ढींढोरा पीटने वाली तीस्ता गोधरा स्टेशन पर हिंदू तीर्थयात्रियों को जिंदा जला दिए जाने को एक आम घटना मानती हैं। 28 फरवरी, 2002 को वाशिंगटन पोस्ट को दिए गए इंटरव्यू में तीस्ता ने कहा 27 फरवरी, 2002 को गोधरा स्टेशन पर जिन 59 लोगों को जिंदा जलाया गया वे बाबरी मस्जिद विध्वंस के 10 साल पूरे होने पर अयोध्या से तीर्थयात्रा करके लौट रहे थे। वे मुस्लिमा को चिढ़ा रहे थे और यह हादसा उसकी प्रतिक्रिया हो सकता है। अप्रैल 2009 में द टाइम्स ऑफ इंडिया में छपी एक खोजी रिपोर्ट के मुताबिक गुजरात दंगों की जांच के लिए सुप्रीम कोर्ट द्वारा बनाई गई एक विशेष समिति ने कोर्ट को सौंपी रिपोर्ट में कहा था कि तीस्ता सीतलवाड़ ने खबरों में आने के लिए हिंसक घटनाओं को बढ़ा–चढ़ाकर प्रस्तुत किया और इसके लिए झूठे गवाह तक तैयार किए थे। पूर्व सीबीआई निदेशक आर.के. राघवन की अगुवाई वाली सुप्रीम कोर्ट की जांच समिति ने लिखा था कि तीस्ता और उनके जैसे दूसरे संगठनों के सदस्यों ने लोगों को लालच देकर झूठे मामले दर्ज कराए और फिर उन्हें सही साबित करने के लिए झूठे गवाह तैयार किए। जस्टिस अरिजीत पसायत, जस्टिस पी सथसिवम और जस्टिस

आफताब आलम की बेंच के सामने प्रस्तुत रिपोर्ट में कहा गया था कि भीड़ द्वारा एक गर्भवती महिला कौसर बानो के साथ सामूहिक बलात्कार और फिर धारदार हथियार से उसका गर्भ चीरकर बच्चा निकालने की घटना हुई ही नहीं थी। यह दरअसल तीस्ता और उनके सहयोगियों के दिमाग की उपज थी।

तीस्ता ने गुजरात दंगों की सुनवाई को भटकाने के लिए बेस्ट बेकरी मामले में झूठे गवाह तैयार किए थे जिसे इन्होंने मीडिया के सामने भी पेश किया था। लेकिन मामले की चश्मदीद जहीरा शेख को आखिरकार अदालत में सच्चाई बयान करने का मौका मिला तो उन्होंने सिलसिलेवार ढग से तीस्ता सीतलवाड़ की साजिश को सबके सामने रखा। जहीरा ने बाद में अदालत को बताया कि तीस्ता ने उसे और उसके परिवार के सदस्यों को झूठी गवाही देने के लिए पहले तो लालच दिया फिर जान से मरवाने की धमकी दी। जहीरा ने कहा कि जान का भय होने की वजह से उसने अदालत में पहले झूठ बोला जिसके लिए तीस्ता ने बाध्य किया था। बयान बदलने की वजह से जहीरा को एक साल की सजा हुई पर कोर्ट ने तीस्ता को गवाह को धमकाने के लिए कोई सजा नहीं दी। बहरहाल अदालत ने तीस्ता को कड़ी फटकार लगाई थी।

सांप्रदायिक हिंसा विधेयक यानी भ्रम का एक पुलिंदा

इस विधेयक का जन्म ही एक भ्रम की स्थिति में हुआ है। इसलिए विधेयक के मसौदे पर असंतोष की आवाज सबसे पहले अंदर से ही उठी थी। विधेयक की सलाहकार समिति और ड्राफ्टिंग कमेटी के बीच काफी गतिरोध था। जिसकी वजह से यह तय ही नहीं हो पाया कि विधेयक का मकसद क्या है? भ्रम का आलम यह था कि कानून के जानकारों की मौजूदगी में इसमें बहुत से ऐसे प्रावधान भर दिए गए जो सीधे–सीधे संविधान का उल्लंघन करते थे। स्वाभाविक था कि इसकी आलोचना होती। राष्ट्रीय एकता परिषद की बैठक में विभिन्न दलों के नेताओं ओर राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने तो इस विधेयक की औचित्यविहीन बताया है, आम जनता और यहां तक की बिल तैयार कर रही समिति के सदस्यों ने भी आलोचना की। इस विधेयक का ड्राफ्ट 28 अप्रैल को लोगों के सामने रखा गया और उनसे इस पर प्रतिक्रिया मांगी गई थी। बिल के ज्यादातर प्रावधानों के विरोध में तीखी प्रतिक्रिया शुरू हुई तो सलाहकार समिति और ड्राफ्टिंग कमेटी के बीच का गतिरोध भी सतह पर आने लगा। सलाहकार समिति के बहुत से सदस्य कई प्रावधानों के खिलाफ थे।

ड्राफ्टिंग कमेटी के दो सदस्यों कानून विशेषज्ञ उषा रामनाथन आर नागरिक अधिकारों की हिमायती वकील वृंदा ग्रोवर ने इस पर अपनी नाराजगी व्यक्त करते हुए 20 फरवरी को इस्तीफा दे दिया था। उषा रामनाथन और वृंदा ग्रोवर ने ड्राफ्टिंग कमेटी का सदस्य होने के नाते राष्ट्रीय प्राधिकरण बनाने के प्रावधान का विरोध करते हुए अपनी आपत्तियां दर्ज कराई थीं

लेकिन जब उन्हें लगा कि शायद कमेटी के कुछ सदस्यों ने पहले से ही अपनी बात मनवाने का तय कर रखा है तो उन्होंने इस्तीफा दे दिया।

इस विधेयक के अध्याय चार में सांप्रदायिक सौहार्द, न्याय और मुआवजे के लिए एक राष्ट्रीय प्राधिकरण बनाने की बात कही गई है। इसमें एक अध्यक्ष, एक उपाध्याक्ष और पांच सदस्य होंगे। एक प्रावधान यह कहता है कि अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को शामिल करके कम से कम चार सदस्य अल्पसंख्यक समुदाय के होंगे। उसी तरह प्राधिकरण में कम से कम एक सदस्य दलित या आदिवासी समुदाय से होंगे। प्राधिकरण के पास यह अधिकार होगा कि वह किसी घटना के घटित होने के बाद या किसी घटना की आशंका होने या हिंसा की किसी घटना को रोकने में अधिकारियों को अक्षम पाने पर स्वयं संज्ञान लेकर उसकी जांच शुरू कर सकती है। प्राधिकरण राज्य सरकार और गैर सरकारी संस्थाओं को एडवाइजरो जारी कर सकता है। राज्य स्तर पर भी ऐसे प्राधिकरण गठित करने की बात विधेयक में है। राज्यों को सबसे ज्यादा एतराज प्राधिकरण को दिए गए उस अधिकार से है जिसके तहत राष्ट्रीय प्राधिकरण राज्य सरकार और उसके अधिकारियों को निर्देश जारी कर सकता है और उसके निर्देश मान्य होंगे।

इस प्रावधान पर सलाहकार समिति में भी मतभेद हैं। उषा रामनाथन के मुताबिक प्राधिकरण बनाने की बात बेमानी है। अब तक के अनुभव बताते हैं कि जांच आयोगों से कोई ठोस नतीजे नहीं निकले हैं और ज्यादातर मामलों में दोषियों को सजा नहीं हो पाई है। इसलिए राज्य स्तर पर ऐसे प्राधिकरणों का गठन बेतुकी बात है क्योंकि इससे प्रशासनिक कार्रवाई में भी अड़चनें पड़ेंगी और राज्य की मशीनरी किसी मामले की तहकीकात में अपना पूरा जोर नहीं लगा पाएगी।

यानी ड्राफ्टिंग कमेटी के दो सदस्यों में ऐसी किसी संस्था के गठन पर मतभेद था और वह मतभेद इतना गहराया कि अंततः कुछ सदस्यों ने इस्तीफा दे दिया। कमेटी के सदस्यों में अशांत क्षेत्र घोषित करने के मुद्दे पर भी मतभेद था। ज्यादातर सदस्य यह मानते थे कि इससे संघीय शासन प्रणाली को चुनौती मिलेगी और केंद्र–राज्य के बीच संबंध खराब होंगे। इसके अलावा जिस क्षेत्र को अशांत क्षेत्र घोषित किया जाएगा वहां सरकार को असाधारण अधिकार मिल जाएंगे जिससे व्यक्तिगत स्वतंत्रता के हनन की भी पूरी संभावना है जो संविधान के मूल मंत्र के विरुद्ध होगा।

सलाहकार समिति के बहुत से सदस्यों ने "Which destroys the secular fabric of the nation" यानी जो समाज की धर्मनिरपेक्ष संरचना को नष्ट करता है पर भी आपत्ति जताई थी। उनका कहना है कि किसी हिंसा को सांप्रदायिक हिंसा में रखने जैसे विषय पर भ्रम पैदा नहीं करना चाहिए बल्कि उसे स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए। सलाहकार

समिति की सदस्य सौम्या उमा ने मीडिया को दिए बयान में कहा था, हमने इस तरह के शब्दों के इस्तेमाल से बचने को कहा था क्योंकि इससे भ्रम की स्थिति पैदा होती है। लेकिन ड्राफ्टिंग कमेटी ने सलाहकार समिति की आपत्तियों की अनदेखी करते हुए गृह मंत्रालय की एक समिति की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया। विरोध की वजह से यह आपत्तिजनक वाक्य हटा दिया गया। यहां एक बात गौरतलब है कि इस कानून के ड्राफ्ट में 47 संशोधनों की बात कही गई है लेकिन सही मायने में केवल चार संशोधान ही हैं। ड्राफ्ट में अल्प विराम और पूर्ण विराम लगाने को भी संशोधनों के रूप में प्रचारित किया गया है जो हास्यास्पद है। इससे यह बात तो साफ है कि सलाहकार समिति बनाना एक ढकोसला भर था। सरकार ने अपने विश्वस्त प्रतिनिधियों के मार्फत पहले से ही तय कर रखा था कि उसे कैसा विधेयक बनाना है।

नौ सदस्यी ड्राफ्टिंग कमेटी के दो सदस्य उषा रामनाथन और वृंदा ग्रोवर की एकदम नहीं चली। गोपाल सब्रहमण्यम तो सरकार का पक्ष रखने के लिए ही बैठाए गए थे। तीस्ता सीतलवाड़ की हिंदुओं से घृणा जगजाहिर है। बाकी सदस्य या तो वामपंथी विचारों के प्रणेता हैं या फिर उन्हें सरकार की नीतियों के साथ खड़े होने में लाभ नजर आ रहे थे। ऐसे में बहुसंख्यक हिंदुओं के साथ अन्याय तो होना ही था। उन्हें अत्याचारी बताकर उनके खिलाफ जिस तरह से सख्त दंड के प्रावधानों की बात की गई है उससे तो ऐसा ही लगता है कि भारतवर्ष की प्राचीन सभ्यता के वाहक हिंदुओं को देश में दोयम दर्जे का नागरिक बनाने की साजिश चल रही है।

अध्याय–3

राष्ट्रीय एकता परिषद

राष्ट्रीय एकता परिषद का गठन 1961 में हुआ जब प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने राष्ट्र के सामने सांप्रदायिकता, जातिवाद, क्षेत्रवाद जैसी चुनौतियों से मुकाबले के लिए विचार करने के लिए एक सम्मेलन का आयोजन किया था। उस सम्मेलन में तय हुआ कि ऐसे विषयों पर विचार के लिए एक मंच होना चाहिए जिसकी समय–समय पर बैठक हो। इस तरह राष्ट्रीय एकता परिषद यानी एनआईसी का गठन हुआ इसका उद्देश्य था राष्ट्रीय एकता से जुड़े हर विषय पर विचारों का आदान–प्रदान करना और फिर उसके आधार पर भविष्य की रणनीति बनाना। राष्ट्रीय एकता परिषद की पहली बैठक 2–3 जून, 1962 को दिल्ली में आयोजित की गई थी। इस बैठक का एजेंडा था सांप्रदायिकता, जातिवाद, क्षेत्रवाद जैसी चुनौतियों पर चर्चा।

फिलहाल एनआईसी में 147 सदस्य हैं। इनमें केंद्रीय मंत्री, लोकसभा और राज्यसभा में विपक्ष के नेता, सभी राज्यों के मुख्यमंत्री, राजनीति दलों नेता तथा बिजनेस, मीडिया एवं अन्य सामाजिक क्षेत्रा की गणमान्य हस्तियां शामिल हैं। गठन के बाद से लेकर अब तक एनआईसी की कुल 15 बैठकें हुई हैं जिसमें अलग–अलग विषयों पर चर्चा हुई है।

राष्ट्रीय एकता परिषद की बैठकों की सूची

क्रम सं.	दिनांक	वर्ष
1	2–3 जून	1962
2	20–22 जून	1968
3	12 नवंबर	1980
4	21 जनवरी	1984
5	7 अप्रैल	1986
6	12 सितंबर	1986
7	11 अप्रैल	1990
8	22 सितंबर	1990
9	2 नवंबर	1990
10	31 दिसंबर	1991

11	18 जुलाई	1992
12	23 नवंबर	1992
13	31 अगस्त	2005
14	13 अक्टूबर	2008
15	10 सितंबर	2011

(स्रोतः गृहमंत्रालय की वेबसाइट)

एनआईसी की दूसरी बैठक प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने जून 1968 में बुलाई थी। उसमें भी चर्चा का मुख्य विषय सांप्रदायिकता ही था। इंदिरा गांधी ने नवंबर 1980 में इसकी तीसरी बैठक बुलाई। इमरजेंसी के बाद बनी गैर–कांग्रेसी सरकार तीन साल से भी कम समय म गिर गई थी। इंदिरा एक बार फिर से प्रधानमंत्री बनी थीं। इसलिए 1980 की बैठक में आंतरिक कलह के दौरान और उसके बाद पैदा हुए हालात की चर्चा स्वाभाविक थी। जनवरी 1984 में हुई चौथी बैठक में इंदिरा गांधी ने सांप्रदायिक सौहार्द को प्रमुखता से उठाया था।

80 का दशक अशांति से भरा था। देश के अलग–अलग प्रदेशों में दंगे हुए थे इसलिए इस दशक में हुई सभी बैठकों में धार्मिक सौहार्द कायम करने पर जोर दिया गया। इनमें इंदिरा गांधी की हत्या के बाद हुए सिख विरोधी दंगे भी भी शामिल थे। 1986 में एनआईसी की दो बैठकें हुईं। पहली 7 अप्रैल, 1986 को और दूसरी 12 सितंबर 1986 को। 1990 में भी एनआईसी की दो बैठकें हुई जिसमें राम जन्मभूमि मंदिर का मुद्दा छाया रहा। 1991 और 1992 में भी एनआईसी की दो बैठकें हुईं। विवादित बाबरी मस्जिद विध्वंस के बाद कई राज्यों में दंगे हुए। इन बैठकों में गोवध जैसे मुद्दे पर भी चर्चा हुई लेकिन धार्मिक सौहार्द बनाने की चर्चा सर्वोपरि थी। इंदिरा गांधी के दौर से एनआईसी का दुरुपयोग राजनीति के लिए होना शुरू हो गया था। राजीव गांधी और उसके बाद कांग्रेस समर्थित तीसरे मोर्चे की सरकार में एनआईसी पूरी तरह से राजनीति का एक प्लेटफार्म बन गया। बहरहाल इन सरकारों ने एनआईसी का इस्तेमाल सांप्रदायिकता तक ही सीमित रखा था लेकिन यूपीए सरकार ने पुरानी सभी गरिमाओं को तोड़ते हुए इसका इस्तेमाल एक ऐसे मंच के रूप में करने की ठानी जिसके माध्यम से वह न केवल देश की संघीय शासन प्रणाली को तार–तार कर सके बल्कि सांप्रदायिक हिंसा रोकथाम के नाम पर बहुसंख्यकों और अल्पसंख्यकों के बीच कभी न मिटने वाली विभाजन रेखा खींच दे।

13 सालों के लंबे अंतराल के बाद यूपीए की सरकार ने 31 अगस्त, 2005 को एनआईसी की 13वीं बैठक बुलाई। गुजरात में गोधरा के उपरांत पैदा हुई अशांति की आड़ में यूपीए ने सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक जैसा विवादित कानून बनाने का काम शुरू कर दिया। एनएसी के सबसे विवादित सदस्यों की अगुवाई में एक ड्राफ्टिंग कमेटी ने सलाहकार मंडल जिसके ज्यादातर सदस्य किसी न किसी धार्मिक संगठन से जुड़े हैं या अतीत में संबंध रहा है अथवा समय–समय पर विभिन्न मंचों से अपने धार्मिक मंशाओं का इजहार करते रहे हैं, की सलाह से एक विधेयक का प्रारूपा खींचना शुरू कर दिया। सबसे पहले 2005 में, फिर 2009 में और 2011 में इसके तीन अति विवादित ड्राफ्ट आए हैं। विवादित सदस्यों की उपस्थिति की वजह से ऐसा वांछित भी था। राष्ट्रीय एकता परिषद के ज्यादातर सदस्यों ने सरकार की इस कोशिश की एक सुर में आलोचना की है।

अध्याय–4

एनआईसी के सदस्यों का आक्रोश

राष्ट्रीय एकता परिषद की बैठक में सांप्रदायिक एवं लक्षित विधेयक पर तीव्र प्रतिक्रिया हुई। जहां सरकार विधेयक के पक्ष में तर्क पेश कर रही थी वहीं विपक्ष ने अपनी आपत्तियां सिलसिलेवार और तर्कपूर्ण तरीके से प्रस्तुत किया। यूपीए के एक अहम घटक दल तृणमूल कांग्रेस ने भी इस विधेयक पर सरकार का साथ छोड़कर विपक्ष की चिंता के साथ अपना सुर मिलाया। बीजू जनता दल और ऑल इंडिया अन्ना द्रमुक मुनेत्र कषगम और बहुजन समाज पार्टी जैसे दलों ने, जो न तो यूपीए और न ही एनडीए के सदस्य हैं और वामपंथी दलों ने भी यूपीए सरकार की कोशिशों का विरोध किया। सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक पर राज्य सरकारों की प्रतिक्रिया स्वाभाविक थी। कांग्रेस शासित राज्यों के मुख्यमंत्री चाह कर भी विरोध नहीं कर पाए क्योंकि ड्राफ्ट एनएसी ने तैयार किया है जिसकी अध्यक्ष, कांग्रेस की अध्यक्षा भी हैं इसलिए वे विवश थे लेकिन जो विवश नहीं थे उन्होंने हर बिंदु पर अपने विचार रखे। राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की जिस बैठक में इस विधेयक पर चर्चा हुई उसमें बहुत से मुख्यमंत्री स्वयं उपस्थित भी नहीं हुए। उन्होंने अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अपनी आपत्तियां दर्ज कराईं। उनकी अनुपस्थिति उनकी नाराजगी की सीमा का परिचय दे रही थी। इस विधेयक पर मुखर तरीके से विरोध कराने वाले मुख्यमंत्रियों में से एक ममता बनर्जी तो खुद यूपीए का हिस्सा हैं। ममता बनर्जी के अलावा बिहार के मुख्यमंत्री नीतिश कुमार और तमिलनाडु की मुख्यमंत्री जे. जयललिता ने ज्यादा मुखरता से अपना विरोध जताया। इस अध्याय में विधेयक के समर्थक और उसके विरोध में आए बयानों को प्रस्तुत किया जा रहा है।

विधेयक के पक्ष में

डॉ. मनमोहन सिंह, प्रधानमंत्री

यह खुशी की बात है कि राष्ट्रीय एकता परिषद ने सांप्रदायिकता और आतंकवाद से लड़ने में समर्थन और एकजुटता दिखाई है। हिंसा और गैर–कानूनी कार्य किसी हाल में सहन नहीं किए जा सकते। सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधयेक पर अच्छा चर्चा हुई है। कई सदस्यों ने चिंता जताई कि केंद्र राज्यों के अधिकारों में अनावश्यक हस्तक्षेप करना चाहता है जो संविधान के विरुद्ध है। मैं आप लोगों को आश्वस्त करना चाहता हूं कि केंद्र देश के संघीय ढांचे को सुदृढ़ रखने को वचनबद्ध है।

(स्रोतः राष्ट्रीय एकता परिषद की बैठक में प्रधानमंत्री के भाषण का यह अंश पीआईबी की वेबसाइट से लिया गया है।)

मौलाना महमूद मदनी, सांसद व अध्यक्ष, जमायत–ए–उलेमा–ए–हिंद

हमने प्रधानमंत्री और यूपीए की अध्यक्ष सोनिया गांधी से गुजारिश की है कि समाज के हाशिए पर खड़े लोगों का भरोसा बढ़ाने के लिए सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक को जल्द से जल्द संसद में पेश करें। प्रधानमंत्री ने हमें भरोसा दिलाया है कि यह विधेयक जल्द ही सदन में पेश किया जाएगा।

(स्रोतः इंडियन एक्सप्रेस, 26 नवंबर, 2011)

लालू प्रसाद यादव, अध्यक्ष, राष्ट्रीय जनता दल

सांप्रदायिकता से लड़ने के लिए देश को एक मजबूत सांप्रदायिक हिंसा विरोधी कानून की लंबे समय से जरूरत थी। सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक उस कमी को पूरा करेगा। मैं पूरे मन से इस विधेयक का समर्थन करता हूं।

(स्रोतः ट्रिब्यून, 11 सितंबर, 2011)

विधेयक के विरोध में उभरे स्वर

1. जे. जयललिता, अध्यक्ष, एआईएडीएमके व तमिलनाडु की मुख्यमंत्री

'समूह' शब्द पर प्रक्रिया

यह विधेयक लोकतंत्र के मूल्यों का हनन करने वाला और फासीवादी विचारों को बढ़ावा देने वाला है। यह संविधान के मूल प्रावधानों के विरूद्ध है। इस कानून में बहुत सी ऐसी बातें हैं जिसकी मनचाही व्याख्या करके निर्दोषों को प्रताड़ित किया जा सकता है। इसे लागू करने के पीछे मुझे केंद्र की निहीत असंवैधानिक मंशा दिखाई पड़ती है। केंद्र सरकार भटक गई है। लोकतंत्र में आस्था रखने वाली सभी ताकतों का यह प्राथमिक दायित्व है कि वे इस विधेयक का एक स्वर में पुरजोर विरोध करें और इस बात को सुनिश्चित करने में कोई कसर न बाकी रखें कि ताकि विधेयक पेश होने से पहले ही दम तोड़ दे।

धारा 20 पर प्रतिक्रिया

इसमें मौजूद धारा 20 के प्रावधान कहते हैं कि किसी भी देश में होने वाली संगठित सांप्रदायिक हिंसा की स्थिति में केंद्र आतंरिक अशांति की घोषणा कर सकती ह। इस तरह केंद्र की तलवार राज्य सरकारों पर हमेशा लटकती रहेगी। इससे एक संदेश यह भी जाता है कि मात्र केंद्र में बैठी सरकार को ही राज्यों में होने वाली संगठित सांप्रदायिक हिंसा को रोकने की चिंता होती है, जबकि राज्य सरकारें इसे भड़काने को उतारु रहती हैं। यह सरकारिया आयोग के प्रावधानों का भी उल्लंघन करने वाला है जिससे केंद्र और राज्य सरकारों के बीच संबंध खराब होंगे।

अध्याय 7 पर प्रतिक्रिया

पीड़ितों को राहत, सुरक्षा, मुआवजा और पुनर्वास का इंतजाम हर राज्य सरकारें करती हैं क्योंकि यह उनका प्राथमिक दायित्व है। इसकी जिम्मेदारी राज्य सरकारों की ही होती है, केंद्र का काम केवल निगरानी करना है. केंद्र अपनी धौंस जमाने की कोशिश कर रहा है और राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्रों का हनन करने को उतारु है। इस तरह राज्य सरकारों को पंगु बनाने की कोशिश हो रही है ताकि वे पूरी तरह से केंद्र के रहमोकरम पर आश्रित हो जाएं। एस.आर.बोम्मई मामले में सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद केंद्र का धारा 356 के मनमाने इस्तेमाल से हाथ बांध दिए हैं इसलिए केंद्र उसके लिए एक नया रास्ता तैयार कर रहा है।

(स्रोतः द हिंदू, 10 सितंबर, 2011)

2. शिवराज सिंह चौहान, मुख्यमंत्री, मध्य प्रदेश (भाजपा)

यह विधेयक सामाजिक संरचना को खराब कर एक समुदाय के मन में दूसरे के प्रति नफरत का माहौल पैदा करेगा। इससे देश के संघीय स्वरूप पर भी आघात होगा। विधेयक के प्रावधानों को देखकर ऐसा लगता है कि केंद्र सरकार, राज्य सरकारों पर बिल्कुल भरोसा ही नहीं करती। संगठित सांप्रदायिक हिंसा जैसा शब्द देकर एक भ्रम का माहौल तैयार किया जा रहा है। यह राष्ट्र के हित में नहीं है।

(स्रोतः द हिंदू, 10 सितंबर, 2011)

3. ममता बनर्जी, मुख्यमंत्री, पश्चिम बंगाल (तृणमूल कांग्रेस)

हमारी सरकार को इस बिल पर गंभीर आपत्तियां हैं। इस बिल आशय तो यही लगता है कि केंद्र, राज्य सरकारों के काम में जानबूझकर फिजूल हस्तक्षेप करने की मंशा रखता है। यह संघीय शासन प्रणाली के मूल विचार के खिलाफ है।

केंद्र को सांप्रदायिक हिंसा रोकने के लिए अलग से विधेयक लाने की कोई आवश्यकता ही नहीं है। अगर केंद्र सांप्रदायिक हिंसा पर सचमुच उतना चिंतित है और उसे रोकने के लिए गंभीर है तो हमारी यह सलाह है कि केंद्र इस पर कोई कानून बनाने की बजाय इस बात का प्रण ले कि सांप्रदायिक हिंसा भड़काने की स्थिति में वह बिना कोई समय गंवाए राज्य सरकारों को हर जरूरी मदद देगा। यह विधेयक लोगों में केवल भ्रम फैलाएगा और इससे किसी का कोई भला नहीं होने वाला।

(स्रोतः द इंडियन एक्सप्रेस, 10 सितंबर, 2011)

4. प्रकाश सिंह बादल, मुख्यमंत्री, पंजाब (शिरोमणि अकाली दल)

मुझे तो इस विधेयक का प्रयोजन ही समझ में नहीं आ रहा। इस विधेयक का मकसद वाकई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करना है, ऐसा लगता नहीं। सरकार को इस विधेयक को पेश करने से पहले फिर से विचार कर लेना चाहिए। इस बिल की वजह से केंद्र और राज्य सरकारों के बीच नाहक गतिरोध पैदा हो सकता है।

(स्रोतः द हिंदू, 10 सितंबर, 2011)

5. नीतिश कुमार, मुख्यमंत्री, बिहार (जनता दल यूनाइटेड)

समूह शब्द पर प्रतिक्रिया इस विधेयक को देखकर ऐसा लगता है कि हर तरह की सांप्रदायिक घटनाओं के लिए हमेशा देश का बहुसंख्यक समुदाय ही जिम्मेदार होता है। यह विचारधारा बहुसंख्यकों की भावनाओं को भड़का सकती है जिसका खामियाजा बेवजह अल्पसंख्यकों को भुगतना पड़ सकता है।

धारा 20 पर प्रतिक्रिया

किसी आंतरिक अशांति की स्थिति में एक सीमित क्षेत्र में धारा 20 का प्रयोग जो कि संविधान के अनुच्छेद 355 जैसा है, के प्रयोग का प्रावधान भी निंदनीय है। इससे राज्य सरकारों के अधिकार क्षेत्र में केंद्र को अनावश्यक हस्तक्षेप का मौका मिलेगा जो संघीय ढांचे के विरूद्ध है। अगर कोई सरकार राजधर्म निभाने में नाकाम रहती है तो केंद्र सरकार को हस्तक्षेप जरूर करना चाहिए लेकिन वह ऐसा संवैधानिक प्रावधानों के दायरे में रहते हुए कर सकती है। हमेशा राज्य सरकारों से ही चूक होती है, यह मान्यता सही नहीं है। केंद्र सरकार भी भयंकर भूलें करती है और इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है पिछले मुख्य सतर्कता आयुक्त की नियुक्ति।

(स्रोतः द इंडियन एक्सप्रेस, 10 सितंबर, 2011)

6. डॉ. रमन सिंह, मुख्यमंत्री, छत्तीसगढ़ (भाजपा)

प्रस्तावित बिल में खामियों का अंबार है। सबसे बड़ी खामी यह है कि इस बिल का मकसद देश की संघीय संरचना पर प्रहार करना है। इस तरह केंद्र को राज्य सरकारों के साथ मनमानी को मुक्त होगी।

7. नरेन्द्र मोदी, मुख्यमंत्रो, गुजरात (भाजपा)

सोनिया गांधी के नेतृत्व में राष्ट्रीय सलाहकार परिषद बहुसंख्यकों का अपमान करते हुए उन्हें हिंसक प्रवृत्ति का बता रही है। सलाहकार परिषद ने जो विधेयक तैयार किया है वह

विकृत मानसिकता का प्रतीक है। भेदभाव और विभाजक प्रवृत्ति की इससे बड़ी मिसाल और क्या हो सकती है?

(स्रोतः द हिंदू, 10 सितंबर, 2011)

8. सुषमा स्वराज, नेता प्रतिपक्ष, लोकसभा

आप किसी व्यक्ति को सिर्फ इसलिए अपराधी ठहरा सकते हैं क्योंकि वह व्यक्ति एक बहुसंख्यक समुदाय में पैदा हुआ है? क्या कोई व्यक्ति हमेशा इसलिए पीड़ित हो सकता क्योंकि वह किसी खास समुदा से आता है? ऐसे प्रावधानों वाला विधेयक बहुत खतरनाक ह। जो ड्राफ्ट तैयार किया गया है उससे तो यही साबित होता है कि देश के बहुसंख्यक (हिंदू) आततायी हैं और अल्पसंख्यकों का हमेशा उत्पीड़न ही होता है परंतु हमारे देश में कई समुदाय अगर एक प्रदेश में बहुसंख्यक हैं तो किसी अन्य प्रदेशों में अल्पसंख्यक हैं लेकिन कश्मोर में बहुसंख्यक। ऐसे में इस विधेयक के प्रावधान किसी भी प्रदेश के बहुसंख्यकों के विरुद्ध जाएगा। किसी व्यक्ति का आंकलन उसके चाल–चलन और कामकाज के तरीके से किया जाना चाहिए न कि उसके धर्म से।

(स्रोतः द इंडियन एक्सप्रेस, 10 सितंबर, 2011)

9. नवीन पटनायक, मुख्यमंत्री, उड़ीसा (बीजू जनता दल)

प्रस्तावित सांप्रदायिक हिंसा विधेयक राज्य सरकारों की स्वायत्ता का हनन करने वाला है। संविधा केंद्र और राज्य के बीच सौहार्द के माहौल में सहयोग की बात करता है लेकिन यह विधेयक उस नीति के विरुद्ध है इसके वर्तमान स्वरूप में इसे विचार के लिए लाया ही नहीं जाना चाहिए केंद्र को चाहिए कि सांप्रदायिक हिंसा की स्थिति में वह राज्य सरकारों को जरूरत के मुताबिक सुरक्षा बल मुहैया कराने में कोई ना–नुकुर ना करे सांप्रदायिक हिंसा का मुकाबला मिलजुलकर आसानी से किया जा सकता है और राज्य सरकारें इसमें समर्थ हैं।

(स्रोतः द हिंदू, 10 सितंबर, 2011)

10. अरुण जेटली, नेता प्रतिपक्ष, राज्यसभा

यह विधेयक देश में एकसमान आपराधिक कानून की भावना के विरुद्ध है। यह बहुसंख्यकों को परेशान करने के लिए बनाया गया है और अपने आप में सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने वाला है ऐसा लगता है कि देश में विभाजन और भेदभाव की भावना को प्रोत्साहित करने के मकसद के साथ इस विधेयक की रूपरेखा तैयार की गई है। कानून व्यवस्था राज्यों के अधिकार क्षेत्र में आता है लेकिन यह विधेयक देश की संघीय शासन व्यवस्था का सम्मान नहीं करता। यह विधेयक देश को धार्मिक आधार पर दो किनारों पर लाकर खड़ा कर

देगा। एक वे, जिन पर यह विधेयक लागू होता है और दूसरे वे जिन पर विधेयक लागू नहीं होता और अपराध की प्रवृत्ति का निर्धारण कर्म के आधार पर नहीं बल्कि जन्म के आधार पर होगा। 21वीं सदी में इस तरह के कानून बनाने की बात हास्यास्पद है।

(स्रोतः द इंडियन एक्सप्रेस, 10 सितंबर, 2011)

11. डीवी सदानंद गौड़ा, मुख्यमंत्री, कर्नाटक (भाजपा)

यह बिल एकतरफा है और बहुसंख्यकों के खिलाफ पूर्वाग्रह के प्रावधानों से भरा पड़ा है। क्या केंद्र समाज को दो ध्रुवों में बांटना चाहता है? अगर बहुसंख्यक अल्पसंख्यकों के विरुद्ध कोई कार्य करें तो उन्हें कड़ी सजा हो लेकिन अल्पसंख्यक कोई अपराध करें तो उन्हें मामूली सजा दी जाए, यह कैसा इंसाफ होगा? यह सांप्रदायिक हिंसा को रोकने वाला नहीं बल्कि उसे बढ़ावा देने वाला विधेयक है।

(स्रोतः द इंडियन एक्सप्रेस, 10 सितंबर, 2011)

12. सीताराम येचुरी, वरिष्ठ नेता, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी

ऐसा लगता है कि विधेयक मूल उद्देश्य से भटक गया है। जब सांप्रदायिक हिंसा की बात होनी थी तो उसमें जातीय हिंसा को क्यों शामिल किया गया? इस विधेयक के प्रावधान देश के संघीय ढांचे के लिए भी उचित नही हैं। यह संविधान की आत्मा के विरुद्ध है। संविधान में संघीय ढांचे को हर हाल में बनाए रखने की बात है।

(स्रोतः द हिंदू, 10 सितंबर, 2011)

राष्ट्रीय एकता परिषद का सराहनीय प्रयास

सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक ने देश को एक ऐसे मोड़ पर ला खड़ा किया है जहां हम यह सोचने को विवश हैं कि क्या देश की स्वायत संस्थाएं अपना कार्य पूरी जिम्मेदारी से कर रही हैं? जिस तरह से इन संस्थाओं के सदस्यों का चयन किया जा रहा ह वह भी कई सवाल खड़े करता है। क्या राष्ट्रीय सलाहकार परिषद जैसी संस्थाओं का इस्तेमाल राजनीतिक गोटियां बिठाने और किसी गुप्त एजेंडे को लागू करने के लिए किया जाना उचित है? सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक की व्याख्या और इसे तैयार करने वाले लोगों के बारे में थोड़ी जानकारी देकर सरकारी धन से चलने वाली संस्था का वह चेहरा सामने लाने की कोशिश हमने की जिसे बहुत सोची–समझी रणनीति के तहत एक आवरण में लपेट कर रखा गया था। हजारों साल पुराने भारतवर्ष के सामाजिक ताने–बाने को छिन्न–भिन्न करने का जो षड्यंत्र चल रह है वह दुर्भाग्यपूर्ण है।

इस देश में सभी नागरिकों को संविधान एक जैसा अधिकार देता है। फिर किसी समुदाय विशेष के साथ तुष्टिकरण की नीति अपनाना क्या संविधानेतर नहीं है? आखिर इस तुष्टिकरण से हम क्या हासिल करना चाहते हैं? बात अल्पसंख्यकों को विशेषाधिकार देने और बहुसंख्यकों के मौलिक अधिकारों के हनन भर की नहीं है, बात देश की साख की है। इस देश ने वसुधैव कुटुम्बकम के नारे का प्रतिपादन किया है। किंतु सांप्रदायिक हिंसा विधेयक का मात्र एक प्रावधान "ग्रुप थ्योरी" सदियों से चली आ रही हमारी इस मूल भावना का एक झटके में गला घोंट देता है।

एक सवाल अब भी यथावत कायम है कि राष्ट्रीय सलाहकार परिषद से ऐसी भूल क्यों हुई? इसके लिए कौन उत्तरदायी होगा? सलाहकार परिषद के सदस्यों को मनोनीत करने का अधिकार सोनिया गांधी के पास है। सरकारों के पास ऐस संस्थाएं होती हैं परंतु स्वैच्छाचारी आचार नहीं होना चाहिए। अमेरिका के राष्ट्रपति को सलाह देने के लिए काउंसिल ऑफ इकोनोमिक एडवाइजर्स हैं। उसके सदस्यों की नियुक्ति वहां की संसद (सीनेट) की स्वीकृति से होता है, पर यूपीए सरकार की सीनेट तो स्वयं सोनिया गांधी हैं। उन्हें किससे अनुमति लेनी है?

वैसे राष्ट्रीय एकता परिषद न जोरदार तरीके से राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की इस कोशिश का विरोध कर संविधान की आत्मा को बचाए रखने का सराहनीय कार्य किया है।

अध्याय–5

देश की असली चुनौती क्या है? नक्सली हिंसा या सांप्रदायिक हिंसा

देश के गृहमंत्री अलग–अलग मंचों पर लगातार यह कहते आ रहे हैं कि नक्सलवाद देश के सामने सबसे बड़ी चुनौती है। नक्सलवाद जितनी बड़ी समस्या बन गया है उसके सामने सीमापार से घुसपैठ और आतंकवाद कुछ भी नहीं है। देश के गृहमंत्री नक्सलवाद पर इतनी चिंता जता रहे हैं लेकिन सरकार बजाय नक्सलवाद पर काबू पाने के लिए कोई ठोस कानून बनाने या दूसरी पहल करने के अपनी ऊर्जा सांप्रदायिक हिंसा विधेयक पर बर्बाद कर रही है। अफसोस की बात तो यह है कि नक्सलियों के कई बड़े हिमायती सरकार के सलाहकार बने बैठे हैं और सरकार पर इस बात के लिए दबाव बना रहे हैं कि वह नक्सलियों के प्रति लचीला रूख अपनाए। उनके खिलाफ सख्त कार्रवाई बिल्कुल न की जाए।

सांप्रदायिक हिंसा और नक्सली हिंसा की चुनौतियों का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। चूंकि देश की समस्या सुलझाने का जिम्मा सरकार का होता ह और सांप्रदायिक हिंसा पर कानून बनाने की अधीरता सरकार की ओर से ही रही है इसलिए सांप्रदायिक हिंसा और नक्सली हिंसा दोनों में से कौन बड़ी समस्या है इसे समझने के लिए हम सरकारी रिकार्ड और सरकारी आंकड़ों को खंगालते हैं। साल 2010 के आंकड़ों को लेते हैं। 2010 में देश के 11 राज्यों के 96 जिलों में नक्सलियों ने 1995 घटनाओं को अंजाम दिया। इस हिंसा में 937 नागरिकों की जान गई जबकि सुरक्षाबल के 277 जवान शहीद हुए। हालांकि 161 नक्सली भी मारे गए।

2008 से लेकर 2010 तक साल दर साल हुई नक्सली हिंसा और उसमें गई जानों का राज्यवार ब्योरा–

	2008			2008			2010		
राज्य	घटनाएं	मारे गए नागरिक	सुरक्षा बल शहीद	घटनाएं	मारे गए नागरिक	सुरक्षा बल शहीद	घटनाएं	मारे गए नागरिक	सुरक्षा बल शहीद
आंध्र प्रदेश	92	45	1	66	18	0	100	24	0

बिहार	16	52	21	232	47	25	307	72	25
छत्तीसगढ़	620	157	85	529	163	127	625	171	172
झारखंड	484	169	38	742	140	68	501	132	25
महाराष्ट्र	68	17	5	154	41	52	94	35	10
मध्य प्रदेश	7	0	0	1	0	0	7	0	1
उड़ीसा	10	28	73	266	36	31	218	62	17
उत्तर प्रदेश	4	0	0	8	2	0	6	1	0
पश्चिम बंगाल	35	19	7	255	144	14	350	221	35
अन्य	14	3	1	5	0	0	4	0	0
कुल	**1591**	**490**	**231**	**2258**	**591**	**317**	**2212**	**718**	**285**

(स्रोतः गृह मंत्रालय की वेबसाइट)

26 जुलाई, 2011 तक इकट्ठा आंकड़ों के मुताबिक देश में पहले पूर्वार्द्ध में नक्सल हिंसा की 999 घटनाएं हो चुकी हैं। इन घटनाओं में 333 जानें गईं जिसमें 241 नागरिक और सुरक्षाबलों के 92 जवान शामिल थे। देश में जुलाई 2011 तक हुई नक्सली हिंसा का राज्यवार ब्योरा इस प्रकार है–

राज्य	घटनाएं	मारे गए नागरिक	सुरक्षा बल शहीद
आंध्र प्रदेश	15	03	00
बिहार	202	26	03
झारखंड	281	71	17

छत्तीसगढ़	261	61	51
मध्य प्रदेश	04	00	00
महाराष्ट्र	61	29	06
उड़ीसा	104	19	14
उत्तर प्रदेश	01	00	00
पश्चिम बंगाल	70	32	01
कुल	**999**	**241**	**92**

(स्रोतः गृह मंत्रालय की वेबसाइट)

केंद्र सरकार नक्सली हिंसा में मारे गए प्रत्येक नागरिक के आश्रितों को एक लाख रुपये और सुरक्षाबलों के जवान को तीन लाख रुपये देती है। इसके अलावा राज्य सरकारें भी अपनी ओर से पीड़ित परिवारों को सहायता देती है। केंद्र सरकार ने नक्सल प्रभावित जिलों के लिए कुछ विकास योजनाएं बनाई हैं लेकिन केंद्र की सारी मंशा धरी की धरी रही जा रही है क्योंकि नक्सलियों का आतंक ऐसा है कि सरकारी मशीनरी उन जगहों पर पहुंच तक नहीं पा रही है। सरकार की 10,000 करोड़ की योजनाएं लगातार खटाई में पड़ रही है। बीच–बीच में केंद्र सरकार सेना की सहायता लेने की गीदङभभकी देती है जिसके बाद नक्सली एक बड़ी वारदात कर सरकार को लगातार चुनौती देते रहे हैं। क्या सरकार इस हिंसा और इतने बड़े नुकसान को रोकने के लिए कोई उतना ही ठोस कदम उठा रही है या उठाने की योजना भी बना रही है जैसा उसने सांप्रदायिक हिंसा के लिए दिखावा किया है। इसका जवाब है नहीं। ज्यादा पीछे नहीं जाते हैं। आपको याद करने में तकलीफ न हो इसलिए अपनी बात को इसी साल में सीमित रखते हैं। क्या आपको सांप्रदायिक घटना की ऐसी कोई घटना याद आती है जिसमें 333 जानें गईं होगीं? अगर सांप्रदायिक हिंसा की कोई दुखद घटना इस साल हुई भी है तो वह भी कांग्रेस शासित राजस्थान के भरतपुर में जिसमें छह लोगों की जान गई। क्या सरकार प्राथमिकताएं नहीं तय कर पा रही? देश की जनता को नक्सल हिंसा से राहत दिलाने का कर्तव्य क्या केंद्र का नहीं है? क्यों नक्सल हिंसा के समय में केंद्र को संविधान का वह प्रावधान नजर आने लगता है जिसमें कानून–व्यवस्था का दायित्व राज्य सरकारों को दिया गया है? ऐसा दोहरापन क्यों? क्या सरकार यह चाहती है कि देश में सभी हिंदू वेटिकन जाकर ईसाइयत अपना लें? देश के हिंदुओं को यूपीए की मंशा पर सोचना होगा?

प्रतिष्ठान के अन्य प्रकाशन

1.	Terrorism and Indian Media	80.00
2.	आतंकवाद और भारतीय मीडिया	80.00
3.	Deceptive Equality (Deconstructing the Equal Opportunity Commission)	50.00
4.	भ्रामक समानता (समान अवसर आयोग की समीक्षा)	50.00
5.	Census 2011: Blinkered Vision Fragmented Ideas	50.00
6.	जनगणना 2011: बाधित दृष्टि विखंडित विचार	50.00
7.	न्यू मीडिया चुनौतियां और संभावनाएं	50.00
8.	The Issue of Enemy Property and India's National Interest	50.00
9.	राष्ट्रीयता का यक्ष प्रश्न? शत्रु संपत्ति पर सांप्रदायिक राजनीति	35.00
10.	अजीज बर्नी की पुस्तक "आरएसएस की साजिश–26/11" (सच या झूठ का पुलिंदा?)	50.00
11.	षड्यंत्र सिद्धांत के खलनायक बेनकाब	50.00
12.	चीनी विस्तारवाद (भारतीय सीमा का अतिक्रमण)	50.00
13.	लोकतंत्र पर प्रहार (नागरिक अधिकारों का हनन)	50.00
14.	सांप्रदायिक एवं लक्षित हिंसा विधेयक (लोकतंत्र, संघवाद, पंथनिरपेक्षता पर प्रहार)	30.00
15.	Hole in the Bucket (Examining Prevention of Communal & Targeted Violence Bill-2011)	30.00
16.	NAC's Hindu Apartheid Law (Prevention of communal & Targeted Violence Bill-2011)	25.00
17.	The Dragon Tale (Dubious Design, Dangerous Liaison)	60.00